"घुमंतू जनजाति का दहकता दस्तावेज : पराया"

डॉ. गायकवाड शितल माधवराव
हिंदी विभाग (सहाय्यक प्राध्यापक)
शिक्षणमहर्षी बापूजी साळुंखे महाविद्यालय, कराड
चलभाष 9921280932

सारांश

महाराष्ट्र में इस जनजाति के अंतर्गत नौ उपजातियां पायी जाती हैं । जिसमें बोरीवाले, धुताले, कामठी, कैजी, लमाण, माकडवाले, उर कैकाडी, भामटा तथा कुंचेकरी आदि । इसमें भारतीय समाजव्यवस्था की उपेक्षित घुमंतू 'कैकाडी' जनजाति का जनजीवन एवं संस्कृति का विवेचन एवं अपने जीवन संघर्ष को लक्ष्मण माने ने प्रस्तुत किया हैं । इस जनजाति की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक आदि समस्याओं को उजागर किया हैं । भूख के कारण इनकी हुई दुरावस्था दरिद्रता एवं दुःख दर्द का मार्मिक चित्रण इसमें हुआ हैं ।

बीज शब्द – जनजाति, भटका, घुमंतू ।

प्रस्तावना

भारत देश में घुमंतू जनजातियां हर क्षेत्र में हैं । प्राचीन काल से यह अस्थिर एवं असुरक्षित हैं । परंपरागत समाज व्यवस्था एवं गाँव में इन्हे कहीं भी स्थान नहीं मिल पाया । कहीं शारीरिक कला कौशल दिखाकर, वन औषधियाँ बेचकर छोटे-छोटे कामकाज कर, भीख मांगकर यह जनजाति अपना उदरनिर्वाह चलाती है । इनमें से कुछ जनजाति भूख से बेहाल होकर पेट के भूख की आग शांत करने के लिए मजबूरन चोरी कर अपना पेट भरती हैं । लेकिन स्थिर समाज के लोगों ने उसे गुनहगार साबित किया है । इसलिए हमेशा हीन-दीन, तुच्छता की दृष्टि से इनकी ओर देखा जाता हैं । गाँव के बाहर अज्ञान, रुढी-परंपरा के कारण दैववाद एवं अंधश्रद्धा की शिकार यह जनजाति बन चुकी हैं । स्थिर समाज से मिली अवहेलना, अन्याय, अत्याचार, बलात्कार, छुआछूत आदि को झेलकर अपने बच्चों तथा गधे-घोडों, कुत्ते, भैंस, उंट, भेड-बकरियाँ आदि के साथ गृहस्थी पीठ पर लादकर झुंड के झुंड दिशाहीन भटकती हैं ।

घुमंतू को मराठी में 'भटका'या 'भटके' यह शब्द प्रचलित हैं । जिसका अर्थ हैं -'जो हमेशा भटकता है या घुमंतू जीवन यापन करता है ।' घुमंतू जनजाति के लिए अंग्रेजी में, 'नोमॅडिक ट्राइब' शब्द प्रचलित हैं । बृहत अंग्रेजी-हिंदी कोश में नोमॅड या नोमाड का अर्थ दिया है - " अस्थिरवासी, यायावरीय, चलवासी, पर्यटनशील, विचरणशील, भ्रमणप्रिय, घुमन्ता, घुमक्कड, खानाबदोश ।"1 इसी कोश में ट्राइब का अर्थ है वन्यजाति, गणजाति, जनजाति, जत्था, टोली, कबीला, आश्रय, गोत्र, गण, वर्ग, वंश, कुल, कुटूंब, जाति, कौम, नसल, प्रकार, भाँति, श्रेणि, किस्म, राजनीतिक विभाग, उपवंश, उपकुल, अनुवंश, अनुकूल और 'ट्राईबमॅन' का अर्थ है "वनजातियक, जनजातियक, जनजातिय, आदिवासी, कबायली, आदमी ।"2 हिंदी विश्वकोश में 'घुमक्कड', भटकना, आदि शब्द मिलते हैं । यहां भटकना का अर्थ तीन प्रकार से दिया गया हैं, "एक व्यर्थ इधर-उधर घुमना फिरना । दो रास्ता भूल जाने के कारण इधर-उधर घुमना और तीन भ्रम में पड़ना । भटकाना का अर्थ हैं गलत रास्ता बताना, ऐसा रास्ता बताना जिसमें आदमी भटके । धोखा देना, भ्रम में डालना ।"3 इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि, जिसे धोखा देकर, भ्रम में डालकर, गलत रास्ता बताकर भटकाया गया और भ्रम में पडकर सही जीवनयापन का रास्ता भूल जाने के कारण जो लोग जीवनयापन के लिए इधर-उधर दिशाहीन घुमते या भटकते रहते है वहीं घुमंतू जनजातिया हैं ।

घुमंतू जनजातियों के अध्ययनकर्ता रामनाथ चव्हाण घुमंतू जनजाति की परिभाषा में कहते है कि, "उपजीविका के लिए पीढी- दर-पीढी घुमंतू जीवन होने के कारण स्थिर समाज के लोगों से यह समाज अनेक सालो से वंचित रहा हैं । कहने के लिए अपना गाँव नहीं, खेती करने के लिए अपनी स्थिर जगह नहीं ऐसी उनकी अवस्था हैं ।"4

पहले इन जनजातियों को गुनहगार घोषित किया जाता था, लेकिन 1952 में यह गुनहगार कानून रद्द किया गया और 11 एप्रिल 1960 में भारत के प्रधानमंत्री पं.जवाहरलाल नेहरू ने महाराष्ट्र के सोलापूर में सेटलमेंट कॉलनी के लोगों को 'विमुक्त' अर्थात 'विशेष रुप से मुक्त' कहकर संबोधित किया । तब से इन गुनहगार जनजातियों को विमुक्त जनजाति कहा जाने लगा । लेकिन भारत स्वतंत्रता के 75 वर्ष बाद भी आज इन घुमंतू जनजातियाँ की स्थिति बहुत कुछ मात्रा में जैसी की वैसी ही दिखाई देती है, आज भी वह गाँव -गाँव भटकते फिरते नजर आते हैं इनके पास ना ही कोई रोजगार के साधन हैं या ना ही कोई

अपनी जमीन। स्थिर समाज व्यवस्था और पुलिस आज भी इनकी ओर गुनहगार दृष्टि से ही देखती हैं। साहित्य की कुछ रचनाओं के माध्यम से जिस प्रकार सर्व प्रथम दलितों ने फुले, शाहू, आंबेडकर जैसे महामानवों की प्रेरणा से अपनी व्यथा-कथा को वाणी देने का प्रयास किया तो धीरे-धीरे उनकी स्थिति में कुछ परिवर्तन आया। बिलकुल उसी प्रकार आज के समय में कुछ घुमंतू जनजातियों के रचनाकार अपने भोगे हुए यथार्थ को समाज के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहे है और मानव के अधिकार की पहचान अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहे हैं।

घुमंतू जनजातियों की विभिन्न दशाओं का चित्रण भारतीय साहित्य की विविध विधाओं कविता, कहानी, उपन्यास, आत्मकथा आदि विभिन्न प्रकारों में मिलता हैं। महाराष्ट्र में आज मराठी साहित्य में घुमंतू जनजाति के स्वकथनों की संख्या लगभग तीस के आसपास मिलती है। उसमें से सात स्वकथनों का हिंदी में अनुवाद हुआ हैं। इसमें लक्ष्मण गायकवाड का 'उचक्का', लक्ष्मण माने का 'पराया', किशोर शांताबाई काले का 'छोरा कोल्हाटी का', दादासाहब मोरे का 'डेराडंगर', भीमराव गस्ती का 'बेरड', मच्छिंद्र भोसले का 'जीवन सरिता बह रही है', पार्थ पोलके का 'पोतराज' आदि स्वकथनो के माध्यम से इन रचनाकारो ने दलित चेतना के प्रभाव से कुछ शिक्षित युवक अपने एवं अपने समाज के जीवन की संघर्ष गाथा अभिव्यक्त करने लगे हैं। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षिक आदि स्तरों पर किस प्रकार इस जनजाति को उपेक्षित स्थान समाज में मिलता हैं उसको अपने स्वकथनों के माध्यम से इन्होंने चित्रित किया हैं। प्रस्तुत आलेख में घुमंतू जनजाति का प्रसिद्ध स्वकथन लक्ष्मण माने लिखित 'पराया' का संदर्भ लेकर इस जनजाति की दयनीय अवस्था को प्रस्तुत कर एक मनूष्य ने दूसरे मनूष्य की संवदेना की पहचान कराने का प्रयास किया गया हैं।

'पराया' यह स्वकथन मराठी साहित्य के प्रसिद्ध रचनाकार लक्ष्मण माने का हैं। इसको मराठी में 'उपरा' नाम से ग्रंथाली प्रकाशन, मुंबई से 25 दिसंबर 1960 में प्रकाशित किया गया हैं। इसका हिंदी अनुवाद दामोदर खडसे ने 'पराया' नाम से सन 1993 में साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली से प्रकाशित किया हैं। महाराष्ट्र में इस जनजाति के अंतर्गत नौ उपजातियां पायी जाती हैं। जिसमें बोरीवाले, धुताले, कामठी, कैजी, लमाण, माकडवाले, उर कैकाडी, भामटा तथा कुंचेकरी आदि। इसमें भारतीय समाजव्यवस्था की उपेक्षित घुमंतू 'कैकाडी' जनजाति का जनजीवन एवं संस्कृति का विवेचन एवं अपने जीवन संघर्ष को लक्ष्मण माने ने प्रस्तुत किया हैं। इस जनजाति की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक आदि समस्याओं को उजागर किया हैं। भूख के कारण इनकी हुई दुरावस्था दरिद्रता एवं दुःख दर्द का मार्मिक चित्रण इसमें हुआ हैं। लेखक अपने मंतव्य में लिखते है कि, "जो जिया, जो भोगा, अनुभव किया, देखा,वही सब लिखता गया। वही जीवन बार-बार जीता गया।" 5 अर्थात् मानेजीने अपने इस स्वकथन में भोगे हुए यथार्थ को प्रस्तुत किया हैं।

लक्ष्मण माने ने इसमें 'कैकाडी' जनजाति के समाज जीवन के विविध पहलुओ को प्रस्तुत किया हैं। इसमें घुमंतू की समाजव्यवस्था, भटकन की विवशता, पीडित स्त्री-जीवन, बच्चों एवं वृद्धों का दयनीय जीवन, जातपंचायत, घुमंतू का परिवार उसकी वेशभूषा, वैवाहिक संस्कार, रीतिरिवाज, रुढी-परंपरा, अंधश्रद्धा, त्यौहार, जातिभेद एवं छुआछूत आदि का वास्तविक चित्रण हुआ हैं।

'कैकाडी' जनजाति के लोग अपने उदरनिर्वाह हेतु हमेशा गाँव-गाँव भटकते रहते हैं। यह लोग बेत या बाँस आदि के वृक्षों की पतली टहनियों से डालियाँ, टोकरियाँ, सूप आदि बूनकर गाँववालों को बेचते हैं और अपना उदरनिर्वाह करते हैं। एक गाँव में तीन-चार दिन ही जहां बेत और बाँस मिलते हैं वहीं पर ये अपना डेरा लगाते हैं। गृहस्थी की चीजें और बच्चों को गधे पर लादकर गाँव-गाँव भटकते हैं। बापू कैकाडी और जयसिंह की गृहस्थी इसप्रकार भटकती देख लेखक कहते है, " मुझे राधी (गधी का नाम) पर बिठाया। समी भागी (गधी का नाम) पर बैठी... किसन्या को बाप ने कंधे पर उठा लिया। पुष्पी को मेरे सामने राधी पर बिठाया। लाली को माँ ने गोद में ले लिया और गधे चल पडे...। इस तरह हमारी सवारी सारी गृहस्थी के साथ निकल पडी।"6 जिस गाँव में यह जनजाति आसरा देखकर अपनी गृहस्थी बिठाती वह जगह अक्सर गाँव के लोगों की शौच की जगह रहती है, वहाँ पर या शमशान की जगह पर साफ-सफाई कर तीन पत्थरों का चूल्हा बनाकर खाना बनाते हैं। दिनभर माँ डालियाँ, टोकरी बेचने के लिए आसपास के गाँव दूर-दूर तक पैदल चली जाती। जब तक घर पर माँ नही आती तब तक बच्चे भूखे-प्यासे या कहीं कुछ माँगकर "देरी माई, बचा-खूचा, दे दो चाची।"7 कहकर लोगों के सामने हाथ जोडकर भीख माँगकर अपनी भूख मिटाते हैं। धूप के दिनों मे भूख से बेहाल बच्चों का विदारक चित्रण 'पराया' में स्वयं लेखक कहते हैं "मैंने बासी रोटी इमली के पानी में भिगों रखी थी।

पेट में आग धधक रही थी। आँखों से आँसूओं की धारा बह निकली थी। घर में कुछ भी नहीं था।"8 इस प्रकार भूख के कारण हुई ऐसी विदारक स्थिति से स्वयं लेखक और उनकी जनजाति से गुजरना पडता था।

इस जनजाति का अस्थिर जीवन होने की वजह से इनमें स्कूली शिक्षा नसीब में नहीं होती। लक्ष्मण माने जैसा एखाद बच्चा स्कूल में जाने की कोशिश करता है लेकिन स्थिर समाज के लोगों द्वारा दुर्व्यवहार का सामना उनको करना पडता हैं। मास्टरजी उसका स्कूल में दाखिला तक करते नहीं है और उनके पिताजी से कहते है कि, "अरे भिखारियों के लिए भी कहीं स्कूल होती हैं? अरे उनके पढने के बाद टोकरियाँ कौन तैयार करेगा ? यह सब नहीं चलेगा। बडे आये पढने वाले।"9 इस प्रकार की बात सुनकर लेखक के पिताजी और उनके आँखों मे ंपानी आ जाता हैं। उनको शिक्षा के बारे में प्रोत्साहित नही बल्कि उससे दूर किया जाता हैं। लेकिन फिर भी लेखक शिक्षा प्राप्त कर ही लेते है। बाल्यावस्था से ही वह मजदूरी भी करते है। बैंड बजाना, लकडियां काटना, उसे बेचना, बच्चों को संभालना, अखबार और पाव बटर बेचना आदि काम वह करते थे।

वेशभूषा में फटे - मैले कपडे ही इनके नसीब में होते हैं।ऐसी स्थिति में गाँव के बदमाश गुंडों की नजर उनकी स्त्रियों पर पडती हैं। और उनको बलात्कार जैसी समस्या का सामना भी करना पडता हैं। इसलिए वह स्त्रियां आठ-आठ दिन नहाती नहीं थी, अपने बाल संवारती नहीं थी। और अपना चेहरा आईने में देखती नही थी। लेकिन फिर भी कभी-कभी इनपर अतिप्रसंग हो ही जाता था। लेखक की पारु मामी जरा सुंदर है औंर वह थोडी साफ-सूथरी रहती हैं उसे गहरी नींद में सोई देखकर उसका मुँह बांधकर चार गुंडे उसे उठाकर ले जाकर बलात्कार करते है तब पारुमामी दर्द से बेहाल होकर कहती हैं - " बहुत जुल्म हो गया रे बाबा। अब क्या करूँ ? कहकर रोने लगती हैं... बहुत वेदना सही... दरिंदो ने नहीं छोडा, शरीर का चिथडा कर दिया।"10 इस अत्याचार के बाद उसका पति उसे छोड देता है और वह पागल होकर मर जाती हैं। इस स्वकथन में इस जनजाति के स्त्री की पीडा को भी प्रस्तुत किया गया हैं।

उच्च जाति के लोग घुमंतू जनजाति के साथ किस प्रकार जातिभेद करते हैं इसको भी यहां दिखाया गया हैं। सवर्णो की शादी में भोजन के लिए सवर्णों के साथ निम्न जाति के लोग बिठाए नही जाते थे। 'पराया' का लेखक जब अपने मित्र के साथ सवर्णों की शादी में जाते है, सब के साथ वह भी भोजन के लिए बैठते है तब उसे भरी पंगत से उठाया जाता हैं। उच्च जात का लडका लेखक का कान पकडकर भरी पंगत से उसे उठातें हुए कहता हैं, "तेरी माँ की....कुछ पता भी है या नही ? चलो यहाँ से।"11 इस प्रकार 'कैकाडी' जनजाति का लडका उच्चजाति की वर्ग में पंगत में बैठने से उनको अपमानित किया जाता है तब लेखक के पिताजी भी उसे डरा धमकाकर अपनी औकात में रहने के लिए कहते हैं।

स्कूल के अंतिम दिनों में लेखक सभी लडकों के साथ सवर्ण लडकी के बाजू में खडे रहकर फोटो निकालता हैं तो लडकी के पिता लेखक के पिताजी को मार देते हैं। एक मनुष्य होकर दुसरे मनुष्य के साथ छुआछूत जैसा व्यवहार उनके साथ किया जाता हैं। इतना ही नहीं निम्नजाति के होने के कारण लेखक को 'सातारा' में कमरा किराये पर नहीं मिलता। शशि नाम के लडकी के साथ वह अंतर्जातिय विवाह करते है, अपनी आर्थिक समस्या दूर करने के लिए जब समाज कल्याण विभाग में अर्ज करते हैं तो उन्हें नकारा जाता हैं। अकेला अस्पृश्य होगा तो मदत मिलेगी ऐसा कहा जाता हैं तब अपनी व्याकुलता व्यक्त करते हुए वह कहते हैं "महार को कम से कम महारियत होती है। गाँव से कुछ न कुछ मिलता रहता हैं। सिर पर जैसी भी हो एक छत होती हैं.....। निरंतर भटकते रहनेवाला, दिसा मैदान के आदमी को अस्पृश्य नही मानते। फिर क्या कहते हैं? पेट के लिए पावों में घिर्री बांधनेवाला आपका कौन?"12 इस प्रकार जातिभेद जैसी प्रमुख समस्या भी इसमें उजागर हुई हैं।

इस जनजाति में देवी-देवता की आराधना के समय तथा कभी कडी मेहनत मजदूरी के कारण व्यसनाधीनता भी पायी जाती हैं। देवता के प्रसाद के रुप में दारु ग्रहण की जाती हैं। छोटों से लेकर वृद्धों तक सभी यह प्रसाद ग्रहण करते हुए स्वयं लेखक कहते है- "खग्या, इंद्या, म्हाद्या, मैं, माँ, पारी किसी को भी प्रसाद नहीं छोडना था। नारियल का टूकडा और घुंट-घुंट दारु सबने लेनी थी। ना नहीं करना होता इसलिए सबको दी"13 जातपंचायत जब बैठती है तब पंच लोग झगडे-तंटों का निर्णय करके न्यायदान करते हैं तब भी वह शराब आदि का सेवन करते है और गरिब और स्त्रियों का शोषण पंच लोग करते हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि, लक्ष्मण मानेजी ने 'पराया' के माध्यम से 'कैकाडी' इस घुमंतू जनजाति के जीवन की कथा एवं व्यथा को स्पष्ट किया गया है। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षिक क्षेत्र में उनको स्थिर समाजव्यवस्था से उपेक्षाभरी दृष्टि से देखा जाता हैं। जातिभेद, जातपंचायत द्वारा उनका शोषण, स्त्रियों की दयनीय स्थिति, भूख से बेहाल, पीडित इस जनजाति का दुःख-दर्द अपने स्वअनुभव के माध्यम से लेखक ने समाज के सामने लाने का प्रयास किया

हैं। जरुरत है आज ऐसी जनजातियों को अपने हक और अधिकारों की पहचान दिलाने की। क्योंकि वह भी एक मनुष्य हैं तो समाज में उच-निचता की दरी को दूर कर एक मानवतावादी दृष्टि निर्माण कर हर एक मनूष्य की संवेदनशीलता को जागृह करने में निश्चय ही इस रचना ने सफलता हासिल की है ऐसा कहा जा सकता हैं।

संदर्भ सूची

1) डॉ.हरदेव बाहरी -बृहत अंग्रेजी हिंदी कोश भाग-1, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, सं.1969, पृ. 1219
2) वहीं, पृ.2001
3) वसु नगेंद्रनाथ -(सं) हिंदी विश्वकोश, भाग 7, पृ.22
4) चव्हाण रामनाथ-जाति आणि जमाती, मेहता पब्लिशिंग हाऊस, पुणे, तृ.सं.2000, पृ.43
5) लक्ष्मण माने -पराया, अनुवाद दामोदर खडसे, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, सं.1993,पृ. इस पडाव से
6) वहीं पृ. इस पडाव से
7) लक्ष्मण माने -पराया, पृ.13
8) लक्ष्मण माने -पराया, अनुवाद दामोदर खडसे, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, सं.1993 पृ. इस पडाव से
9) वहीं, पृ.इस पडाव से
10) वही, पृ.42,
11) वहीं, पृ.56
12) लक्ष्मण माने -पराया, पृ.111
13) लक्ष्मण माने-पराया, अनुवाद दामोदर खडसे साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, सं.1993, पृ.इस पडाव से